ISSN: 0973-0583

स्वामी विवेकानन्द की दृष्टि में शिक्षा की प्रसांगिकता

प्रो० विनोद कुमार चौधरी

दर्शनशास्त्र विभाग, नव नालन्दा महाविहार (सम विश्वविद्यालय), नालन्दा (बिहार)

समकालीन भारतीय दर्शन में स्वामी विवेकानन्द एक महान विचारक के रूप में प्रतिष्ठित है। इनके दर्शन में अध्यात्म के साथ-साथ व्यावहारिक दर्शन पर भी काफी बल दिया गया है। यद्पि विवेकानन्द वेदान्त की शिक्षा से प्रभावित हैं और उनका सारा दर्शन वेदान्त दर्शन पर ही आधारित है, लेकिन वेदान्त के अलावे ज्ञान-विज्ञान की ऐसी कोई धारा नहीं है जो उनसे अछूती हो। वेदान्त के साथ-साथ विवेकानन्द, बुद्ध के दर्शन से भी प्रभावित हैं। विवेकानन्द बुद्ध की 'सर्वमुक्ति विचार' एवं बौद्ध विचार में अनुशंसित सम्यक् कर्मान्त एवं सम्यक् आजीव से भी प्रभावित थे। पुनः विवेकानन्द बौद्ध दर्शन के उस विचार से स्पष्टतः प्रभावित होते हैं जहाँ यह कहा गया है कि जिस नाव की सहायता से कोई नदी पार कर लेता है, उसे उस नाव को इस प्रकार छोड़ना चाहिए कि अन्य भी उसका उपयोग कर सके।[1]

मानव जीवन में शिक्षा का महत्त्व सर्वोपरि है। शिक्षा की प्रासंगिकता अत्यन्त प्राचीन काल से ही दिखाई पड़ती है। अन्य प्राणियों के साथ-साथ मनुष्य ने विकास की एक लम्बी यात्रा तय की है। विवेकानन्द के अनुसार इस यात्रा क्रम में अन्य प्राणियों की अपेक्षा मनुष्य ने जो सर्वांगीण विकास प्राप्त किया है, उसके आधारभूत कारणों में शिक्षा महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती आ रही है। प्रसिद्ध यूनानी दार्शनिक अरस्तु का कथन है- मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। मनुष्य के जीवन में शिक्षा के महत्त्व को स्पष्ट करता है। विवेकानन्द के अनुसार जहाँ अन्य प्राणियों के नवजात शिशु बिना शिक्षा के ही अनेक क्रियाएँ स्वतः करने लगते हैं, वहीं मनुष्य के नवजात शिशु सीखने की अनिवार्य प्रक्रिया से होकर ही जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में कुशलता प्राप्त करता है। शिक्षा से प्राप्त संस्कार किसी से छिपी नहीं है।भर्तृहरि ने इसी को धर्म शिक्षा से महत्त्व देते हुए कहा है-

आहार निद्राभयमैथुनं च सामान्यमेतत्पशुभिर्नराणां।
धर्मोहि तेषामधिको विशेषो धर्मेणहीनाः पशुभिः समानाः।।[2]

अर्थात् आहार, निद्रा, भय और मैथुन ये सभी क्रियाएँ मनुष्य एवं अन्य प्राणियों में समान रूप में पायी जाती हैं, लेकिन मनुष्य इससे भिन्न बनाने वाला तथ्य धर्म या सीखे गए संस्कार हैं। जो मनुष्य इन संस्कारों से रहित हैं, वे पशुओं के सामान हैं। निम्न कथनों में भी शिक्षा के महत्त्व को दर्शाया गया है-

विद्या नामनरस्य रूपमधिकं प्रच्छन्नं गुप्तं धनं।

विद्या भोगकरी, यशः सुखकरी, विद्यागुरुणांगुरु।

विद्या बन्धु जनो विदेशगमने, विद्या परादेवतं।
विद्या राजसु पूज्यते न हि धनं विद्याविहीनः साक्षात्पशुः।।[3]

आज की समुन्नत संचार प्रणाली के समुन्नत वातावरण में रहने वाले आधुनिक मानव समाज के विकास की जो लम्बी यात्रा मनुष्य ने पूरी की उसमें सबसे अधिक शिक्षा का महत्त्व है। वस्तुतः शिक्षा की महत्ता सभी कालों और सभी स्थानों एवं सभी क्षेत्रों में समान रूप से रही है। शिक्षा के बिना हम आज की समुन्नत समाज की कल्पना नहीं कर सकते।

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार शिक्षा मानव की अन्तर्निहित पूर्णता की अभिव्यक्ति है।[4] शिक्षा के कारण ही मनुष्य अपने अन्दर की कुप्रवृत्तियों पर नियंत्रण कर पाता है। विवेकानन्द की मान्यता है कि सम्पूर्ण ज्ञान मानव के अन्दर बीज रूप में छिपा हुआ रहता है वह धीरे-धीरे समय के साथ प्रस्पटुटित होता है। सच पूछा जाय तो जो ज्ञान आदिकाल से मानव के अन्दर विद्यमान है, उसी को शिक्षा बाह्य रूप में प्रकट करता है।[5]

विवेकानन्द वैसी शिक्षा के पक्षधर थे जिससे छात्रों का चारित्रिक विकास, मानसिक विकास के साथ-साथ आध्यात्मिक विकास हो सके। साथ ही वह अपने पैरों पर खड़ा हो सके। सारे शिक्षण-प्रशिक्षण का अंतिम ध्येय मनुष्य का चारित्रिक निर्माण होना चाहिए। इसके लिए ब्रह्मचर्य व्रत के पालन से मनुष्य का मन, वचन एवं कर्म

पवित्र बना रहता है। मन, वचन एवं कर्म के पवित्र होने से उनमें बौद्धिक एवं आध्यात्मिक शक्तियाँ उत्पन्न होंगी जो चरित्र निर्माण में सहायक होगी। मनुष्य के चरित्र उनकी अनेक प्रवृत्तियों की समरूप है। सुख एवं दुःख ज्यों-ज्यों उसकी आत्मा से होकर गुजरते हैं वे उस पर अपनी-अपनी छाप या संस्कार छोड़ जाते हैं और इन सबका विभिन्न छापों की समष्टि ही मनुष्य का चरित्र कहलाता है। मनुष्य वही होता है जो उन्हें उनके विचारों ने बनाया है। इस तरह चारित्रिक विकास करना भी शिक्षा का सर्वश्रेष्ठ उद्देश्य है।[6]

विवेकानन्द दबाव में दी जाने वाली शिक्षा के घोर विरोधी थे। इनके अनुसार विद्यार्थी को इतनी स्वतंत्रता मिलनी चाहिए कि वह खुद निर्णय लें कि उन्हें जीवन में क्या करना चाहिए? कौन सी शिक्षा पानी चाहिए जिससे उनकी आध्यात्मिक विकास के साथ-साथ बौद्धिक विकास भी हो सके। जबरन एवं जोर जबरदस्ती शिक्षा के घोर विरोधी थे। क्योंकि किसी प्रकार का अनुचित दबाब में विद्यार्थी कुण्ठित हो जाता है। इसलिए विद्यार्थी को उनकी प्रवृत्ति के अनुसार मार्ग दिखाना चाहिए, क्योंकि विद्यार्थी स्वयं अपने-आपको शिक्षित करने में सक्षम होता है।[7] एक कुशल एवं सच्चे शिक्षक का काम है- 'विद्यार्थी के आन्तरिक ज्ञान को जागृत कर देना।'

विवेकानन्द के अनुसार शिक्षकों का चरित्र निष्कलंकित एवं पवित्र होना चाहिए जिससे वह उच्चतम ज्ञान एवं चरित्र का आदर्श छात्रों के सामने रख सकें। बिना सच्चा एवं आदर्श गुरु के शिक्षा संभव ही नहीं है। गुरू को अनासक्त भाव से ही शिष्यों को शिक्षा देनी चाहिए। शिक्षक से अत्यन्त उच्च कोटि की योग्यता की अपेक्षा की जाती है ताकि वह अपनी पवित्रता चारित्रिक बल, पांडित्य और सदाचारी जीवन के द्वारा उसके चरणों में बैठे छात्रों के जीवन पर ऐसी छाप पड़े जो अमिट रहे।

विवेकानन्द भारतीय नारियों की स्थिति से काफी दुःखी थे। वे चाहते थे भारतीय नारियाँ पुरुषों के साथ कंधे से कंधे मिलाकर चलें। विवेकानन्द की मान्यता थी कि शिक्षा के द्वारा ही स्त्रियों की दशा एवं दिशा बदली जा सकती है। यही कारण था कि विवेकानन्द पुरुषों के समान स्त्री शिक्षा के पक्षधर थे। स्वयं उनके ही शब्दों में-हम स्त्रियों को उचित सुविधा दें उसके उपरान्त वह स्वयं अपनी समस्याओं को सुलझा लेगी। यदि ऐसा हो जाय तो भारतीय नारियाँ दुनियाँ के किसी भी भाग या क्षेत्र की नारियों से पीछे नहीं रहेंगी।[8] यदि एक महिला शिक्षित होती है तो वह अपने परिवार को शिक्षित करती है। ये सभी बच्चे आगे चलकर देश का नाम रौशन करते हैं। विवेकानन्द के अनुसार शिक्षित माताओं के घर में ही महापुरुष जन्म लेते हैं।[9] स्त्रियों को शिक्षित करने से जिस सही दिशा की प्राप्ति होती है उससे उनकी बुद्धि, बल और कार्य कुशलता में वृद्धि होती है।

विवेकानन्द शिक्षा को जन-जन तक पहुँचाना चाहते थे। उनका मानना था कि शिक्षा का उद्देश्य तभी पूर्ण होगा जब तक देश के हर नागरिक शिक्षित न हो जाय। शिक्षित नहीं होने के कारण आज भी दलितों, शोषितों, पीड़ितों का पूर्व की भाँति शोषण हो रहा है। जब तक जन-जन की इच्छा की पूर्ति न हो जाय तब तक भारतीय शिक्षा को अधूरी माना जाएगा।[10] आज भी भारत की विशाल आबादी को शिक्षित करना प्रमुख ध्येय होना चाहिए। उन्होंने स्वीकार किया है कि जब तक करोड़ों लोग भूख एवं अज्ञान में जीवन बिता रहे हैं तब तक उस प्रत्येक मनुष्य को देशद्रोही मानता हूँ जो उनके व्यय से शिक्षित हुआ है और अब उनकी ओर तनिक भी ध्यान नहीं देता है। विवेकानन्द का मानना है कि समाज में व्याप्त कुरीति, आडम्बर, अस्पृश्यता, छुआछुत, जातिवाद, आतंकवाद इत्यादि के जड़ में अशिक्षा है। अशिक्षा के कारण ही इन सभी समस्याओं का जन्म हुआ है। जैसे-जैसे मानव शिक्षा प्राप्त करेंगे वैसे-वैसे इन कुरीतियों एवं बुराईयों से मुक्त होंगे। आज स्पष्टतः दिख रहा है कि शिक्षित लोगों के बीच इन कुरीतियों को लेकर सुधार हुआ है जो शुभ का द्योतक है साथ ही यह प्रगतिशील समाज का भी संकेतक है।

विवेकानन्द के अनुसार धर्म एवं शिक्षा अभिन्न है। सच पूछा जाय तो हमारी शिक्षा, बुद्धि एवं विचार पूर्णतः आध्यात्मिक है और वे सभी धर्म में ही पूर्णता पाते हैं।[11] इस दृष्टि से देखें तो स्पष्ट होता है कि धर्म शिक्षा का मेरूदण्ड है। विवेकानन्द के अनुसार शिक्षा वह साधन है जिसके माध्यम से हम अपने स्व को जान पाते हैं। अपने अन्दर की निहित शक्तियों को उजागर कर पाते हैं। इस प्रकार शिक्षा के द्वारा मानसिक, बौद्धिक तथा आध्यात्मिक विकास होता है।[12] विवेकानन्द के अनुसार ज्ञान के लिए अध्ययन तथा गुरु से सीखी बातों में निहित वास्तविकता

को अनुभूत करना अनिवार्य है। इसके लिए सीखे हुए सत्यों पर मनन एवं ध्यान अनिवार्य है। इसी कारण मनन, ध्यान, निदिध्यासन आदि को ज्ञानोपार्जन का वास्तविक ज्ञान के ढ़ंग का अनिवार्य अंग माना जाता है।[13] स्वामी विवेकानन्द की शिक्षा का आधार वेदान्त था जिसका मूल मंत्र है- 'सभी प्राणी में ईश्वर का वास है।' इसलिए विवेकानन्द प्रत्येक प्राणी से प्रेम करने की बात करते हैं। उनका मानना था कि जब तक सभी प्राणी में समता का भाव नहीं देखते हैं तब तक हमें अपने आपको पूर्ण शिक्षित नहीं मानना चाहिए। विवेकानन्द का मानना है कि आज चारों ओर संकीर्ण एवं तुच्छ स्वार्थों का बोलबाला है और मानवीय मूल्य हाशिए पर चले गए हैं। ऐसे में विवेकानन्द के शिक्षा दर्शन से भटकी हुई मानवता को सही दिशा-निर्देश मिल सकती है।

निष्कर्ष:

इस प्रकार कहा जा सकता है कि स्वामी विवेकानन्द शिक्षा के सम्बन्ध में जो बातें कही हैं, वह अनुकरणीय है। विवेकानन्द की यह चिन्ता अत्यन्त ही समीचीन है कि भारतीय शिक्षा को तब तक सफल नहीं माना जा सकता जब तक कि यह जन-जन तक नहीं पहुँचती है। जब तक देश के अधिकांश भाग में शिक्षा के अभाव में अन्धकार छाया रहेगा तब तक हम एक स्वस्थ एवं समुन्नत राष्ट्र की कल्पना नहीं कर सकते। शिक्षाविहीन होना एक सामाजिक कलंक है। शिक्षा के माध्यम से ही हम राष्ट्र को पूर्ण विकसित बना सकते हैं। इस प्रकार स्वामी विवेकानन्द नारियों, दलितों, पीड़ितों, शोषितों, युवाओं, बच्चों के लिए शिक्षा को अनिवार्य माना। जब तक ये सभी पूर्ण शिक्षित नहीं हो जाते तब तक विकसित एवं समुन्नत राष्ट्र की कल्पना नहीं कर सकते। यदि शिक्षा नहीं है तो हम कुएँ के मेढ़क की भाँति हैं जिसकी दुनियाँ कुएँ तक ही सीमित है। शिक्षा ही वह ज्योति है जो हमारे अन्दर के अंधकार, तथा अज्ञान को हटाती है। जैसे ही हमारे अंधकार और अज्ञान हटेंगे वैसे ही हमारी दृष्टि व्यापक होगी। अत: शिक्षा मानवीय विकास की धूरी है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:

1. समकालीन भारतीय दर्शन, बी0 के0 लाल, मोतीलाल बनारसी दास, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण- 1991 पृ. सं.- 03
2. भर्तहरि, नीति शतकम्- 13 सम्पादक- डॉ0 बलवान सिंह यादव, चौखम्भा प्रकाशन, वाराणसी, प्रथम संस्करण. वि. सं. 2067 पृ. - 16
3. वही, पृ. सं.- 66
4. स्वामी विवेकानन्द, विवेकानन्द साहित्य, अद्वैत आश्रम कोलकाता, 1985, खण्ड-प्ट पृ. 358
5. वही, खण्ड- III, पृ. सं.- 342
6. वही, खण्ड, I, पृ. सं.- 342
7. वही, खण्ड, I, पृ. सं.- 123-124
8. वही, खण्ड-III,पृ. सं.- 58
9. स्वामी विवेकानन्द साहित्य,पूर्वोक्त खण्ड III] पृ. 220
10. वही, खण्ड, V,पृ. सं.- 222-23
11. वही, खण्ड, I, पृ. सं.- 13
12. स्वामी विवेकानन्द, भारतीय नारी, अनुवादक इन्द्रदेव सिंह आर्य, राम कृष्ण मठ नागपुर, 1965, पृ.-16
13. वसन्त कुमार लाल, समकालीन भारतीय दर्शन, प्रकाशक-मोतीलाल बनारसीदास, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1991, पृ. संख्या- 41